E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

बुद्धचरित

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

बुद्धचरित अश्वघोष का प्रसिद्ध महाकाव्य है, जिस प्रकार कालिदास का रघुवंश। इसमें तथागत बुद्ध के जीवनचरित, उपदेश तथा उनके सिद्धान्तों का काव्यमय वर्णन किया गया है। इसमें बुद्ध के जन्म से लेकर महानिर्वाण तक की कथा वर्णित है। इस महाकाव्य में मूल रूप में २८ सर्ग थे। चीनी और तिब्बती भाषा में किए गए इसके २८ सर्गों के अनुवाद उपलब्ध हैं। संस्कृत में प्रारम्भ से लेकर १४ सर्ग (१४वें के ३१ श्लोक तक) ही प्राप्त होते हैं। १४ से १७ सर्ग तक का पद्यात्मक भाग १८३० ई० में अमृतानन्द नामक एक नेपाली पंडित ने जोड़ा था। पूरे बुद्धचरित का चीनी अनुवाद धर्मरक्ष, धर्मक्षेम या धर्माक्षर नामक भारतीय विद्वान् (४१४ से ४२१ ई० में) किया था। तिब्बती भाषा में इसका अनुवाद ८०० ई० के लगभग हुआ था। चीनी यात्री ईत्सिग ने इसको विशाल महाकाव्य बताया है। प्रो० कॉवेल (E. B. Cowell) ने १८६३ ई० में इंग्लैण्ड से इसका संस्करण प्रकाशित किया था। बुद्धचरित का अंग्रेजी अनुवाद डा० जॉनस्टन (Dr. Johnston) ने चीनी और तिब्बती अनुवादों को आधार मानकर किया है । सम्प्रति सर्ग १ से १४ तक का श्लोकों सहित तथा शेष का जॉनस्टन के आधार पर हिन्दी अनुवाद सूर्यनारायण चौधरी-कृत (१६४३ ई०) प्राप्य है ।

सर्गानुसार संक्षिप्त कथा इस प्रकार है : सर्ग १- बुद्ध का जन्म; सर्ग २ – अन्तःपुर में विहार, सर्ग ३– रोगी और वृद्ध आदि व्यक्तियों को देखकर मन में संवेग की उत्पत्ति; सर्ग ४ – रमणियों द्वारा बुद्ध को अपने जाल में फँसाने की चेष्टा और बुद्ध द्वारा उनका तिरस्कार; सर्ग ५- बुद्ध का घर से अभिनिष्क्रमण, सर्ग ६ – बुद्ध को छोड़कर घुड़सवार छन्दक का नगर में लौटना; सर्ग ७ -गौतम का तपोवन में प्रवेश; सर्ग ८ - अन्तःपुर की नारियों का विलाप, सर्ग ९- कुमार का अन्वेषण; सर्ग १० - बिम्बसार का आगमन; सर्ग ११- काम की निन्दा; सर्ग १२- बुद्ध का अराड ऋषि के आश्रम में गमन और अराड द्वारा धर्मोपदेश; सर्ग १३- मार (कामदेव) का बुद्ध की तपस्या में विघ्न डालना। दोनों का

युद्ध और कामदेव की पराजय। सर्ग १४ – बुद्धत्व की प्राप्ति । (संस्कृत अंश यहीं तक प्राप्त होता है।) शेष सर्गों की कथा इस प्रकार है- सर्ग १५-धर्मचक्र प्रवर्तन; सर्ग १६- अनेक शिष्यों का दीक्षित होना; सर्ग १७ - महाशिष्यों की प्रव्रज्या; सर्ग १८ - अनाथ पिण्डद की दीक्षा; सर्ग १६ - पिता-पुत्र- समागम; सर्ग २०- जेतवन-स्वीकार; सर्ग २१ – प्रव्रज्या-स्रोत-वर्णन, सर्ग २२ – गौतम का आम्रपाली के उपवन में गमन, सर्ग २३ –आयु पर अधिकार करने के प्रकार का वर्णन; सर्ग २४–गौतम की लिच्छिवियों पर अनुकम्पा; सर्ग २५ – गौतम का निर्वाण-पथ पर अभियान; सर्ग २६ – महापरिनिर्वाण; सर्ग २७ – निर्वाण की प्रशंसा; सर्ग २८ – धातु विभाजन ।

अश्वघोष वैदर्भी रीति का कवि है । वह रामायण, महाभारत और कालिदास की शैली से अधिक प्रभावित है, अतः उसकी शैली में प्रसाद और माधुर्य का बाहुल्य है। उसका दर्शनशास्त्र और व्याकरण पर असाधारण अधिकार है, अतः वह दर्शनों के सूक्ष्म तत्त्वों को अत्यन्त सरल और सुबोध भाषा में रखने में समर्थ है। व्याकरण के पाण्डित्य के कारण वह कहीं-कहीं शब्द-चित्रों का-सा चित्र उपस्थित कर देता है । कुछ स्थानों पर ऐसे क्रियापदों का प्रयोग किया है, जिनसे एक-दो नहीं, अपितु चार-चार अर्थ निकलते हैं। कहीं-कहीं पर उसका व्याकरण-ज्ञान कठपुतली का-सा नृत्य प्रस्तुत करता है। वर्णनों में यथार्थता, सजीवता, स्वाभाविकता और चित्रात्मकता है । उसने अनुप्रास और यमक के अतिरिक्त उपमा और अर्थान्तरन्यास अलंकारों का बहुत सुन्दरता से प्रयोग किया है। भाषा और भाव-सौष्ठव प्रचुर मात्रा में हैं। उसका शास्त्रीय ज्ञान प्रत्यन्त प्रशंसनीय है ।

अश्वघोष अनेक विषयों का महापण्डित था। अश्वघोष बौद्ध होते हुए भी वेद, पुराण के विद्वान् थे, उनकी पुराणों पर पूरी श्रद्धा थी। उसने व्याकरण, दर्शन, पुराण, राजनीति, नीतिशास्त्र, आयुर्वेद, कामशास्त्र और बौद्ध साहित्य का गंभीर अध्ययन, मनन और चिन्तन किया था। उसका भाषा पर असाधारण अधिकार था। उसने कहीं-कहीं एक ही क्रियापद का विभिन्न चार अर्थों में प्रयोग किया है। कहीं व्याकरण की सुन्दर छटा है तो कहीं दर्शन की; कहीं कामशास्त्र की प्रमुखता है तो कहीं विरक्ति की; कहीं शृंगार है तो कहीं करुण; कहीं प्रसाद और माधुर्य हैं तो कहीं ओज; कहीं भाषा-सौष्ठव है तो कहीं भाव- गाम्भीर्य।

बौद्ध महाकवि अश्वघोष महान् धर्मप्रचारक, दार्शनिक तथा उच्चकोटि के विद्वान् भी थे। इनकी रचनाओं के अन्त में यह वाक्य मिलता है-आर्यसुवर्णाक्षीपुत्रस्य साकेतकस्य भिक्षोराचार्यस्य भदन्ताश्वघोषस्य महाकवेर्महावादिनः कृतिरियम्। इससे यह स्पष्ट होता है कि इनकी माता का नाम 'सुवर्णाक्षी' था। ये साकेत (अयोध्याक्षेत्र) के निवासी थे। ये बौद्ध भिक्षु तथा आचार्य थे। यद्यपि अश्वघोष का सम्बन्ध संस्कृत की पुरातन परम्परा से हटकर क्रान्तिकारी बौद्धधर्म के साथ था, तथापि संस्कृत-कवियों के समान इन्होंने अपने को आत्म-प्रकाशन से दूर रखा है। इसीलिए इनके विषय में उक्त अन्तःसाक्ष्य के अतिरिक्त कोई अन्य स्पष्ट प्रमाण नहीं है। बाह्य साक्ष्यों में संस्कृत भाषा में प्राप्त सामग्री नगण्य है; अतएव इनके विषय में अधिकांशतः चीनी और तिब्बती साहित्य से ही तथ्य प्राप्त होते हैं। बौद्ध साहित्य में इनका नाम भक्ति और श्रद्धा से लिया गया है, जिसके फलस्वरूप इनके साथ अनेक किंवदन्तियाँ भी जुड़ गयी हैं।

साहित्यिक वैशिष्ट्य अश्वघोष को संस्कृत साहित्य के प्रारम्भिक कवियों में गिना जाता है जब संस्कृत काव्य में जटिलता का समावेश नहीं हुआ था। पौराणिक शैली का सर्वत्र प्रचार था। इसलिए, बौद्धकवियों की सामान्य प्रक्रिया के अनुसार, अश्वघोष ने भी अपने युग की सरल अल्पसमासयुक्त पदावली अपना कर अपनी बातों से सुललित भाषा में काव्य-रचना की। उनकी कविता-रीति कालिदास के समान वैदर्भी ही है जिसे कालान्तर में काव्यशास्त्रियों ने इस रूप में लक्षित किया। भाषा की सरलता के अतिरिक्त पदावृत्ति द्वारा सौन्दर्य उत्पन्न करने की इस पद्य में प्रचुर क्षमता है। इसी के आगे कवि ने सिद्धार्थ के तपोवन प्रवेश का प्रभाव दिखाया है।

अश्वघोष की भाषा-शैली में भावों के अनुगमन की अनुपम शक्ति है। वे कुछ भी कहते हैं तो सहजता और स्वाभाविकता के आलोक में भाषा का विन्यास करते हैं। समान पदों के विन्यास का आकर्षण उनकी पदावली को कहीं-कहीं ललित बनाकर प्रस्तुत करता है। अश्वघोष के दोनों महाकाव्य शान्तरस-प्रधान हैं। मोक्ष धर्म को एकमात्र प्रतिपाद्य मानकर अन्य रसों को अङ्ग बनाया गया है। काव्य व्याजमात्र है, मोक्ष मूल विषय है।

अश्वघोष ने अपने काव्यों में अलंकार-योजना भी बड़े कौशल से की है। उपमा के प्रति उनका विशेष आकर्षण है। अन्य अलङ्कारों में अनुप्रास, यमक, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, वक्रोक्ति, एकावली आदि प्रमुखता से प्रयुक्त हैं।

अश्वघोष निश्चय ही सहृदय महाकवि हैं। मानवजीवन की मार्मिकता के प्रति सदैव अकृत्रिम रूप से सजग दिखाई पड़ते हैं। महाकवि अश्वघोष कालिदास के समान महान् कवि और विद्वान् हुए हैं।

अश्वघोष एक ऐसे कवि थे जो अपनी कविता को धर्मप्रसारार्थ मानते थे। तभी तो उन्होंने अपनी कविता के सम्बन्ध में स्पष्ट कहा है-इत्येषा व्युपशान्तये न रतये मोक्षार्थगर्भाकृतिः। मुक्ति की चर्चा करने वाली यह कविता शान्ति के लिए है, विलास के लिए नहीं है। काव्यरूप में यह इसीलिए लिखी गई है कि वे श्रोता, जिनका मन अन्य विषयों की ओर दौड़ता है, इसे पढ़े। अश्वघोष मानवता के अभ्युदय और मुक्ति का सन्देश देना चाहते थे। वे अपनी सांस्कृतिक निधि को अदम्य उत्साह के साथ वितरित करने के लिए उत्सुक थे, उनके विचारों पर उनके व्यक्तित्व की छाप पदे-पदे मिलती है। उनकी वाणी इस प्रकार उनके व्यक्तित्व की गरिमा से ओत-प्रोत है।